Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

वर्तमान परिदृश्य में वाल्मीकीय रामायण में अन्तर्निहित पर्यावरणीय संचेतना की प्रासंगिकता

डॉ0 सौम्या कृष्ण
असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,
एस.एस. खन्ना महिला महाविद्यालय,प्रयागराज

Article Info

Volume 4, Issue 6

Page Number : 105-109

Publication Issue :

November-December-2021

Article History

Received : 15 Nov 2021

Published : 30 Nov 2021

सारांश– पर्यावरण ही महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण का आधार है,जिसने समय–समय पर इस महाकाव्य को गति व विस्तार प्रदान किया है।इस सम्पूर्ण काव्य में प्रकृति जहाँ अभिव्यक्त भावों को अर्थवत्ता प्रदान कर प्रभावपूर्ण बनाती है, वहीं सृजन को बोधगम्य बनाने व भाव समप्रेषण में भी सहायक सिद्ध होती है। आदिकवि ने पर्यावरणीय कारकों नदी, पर्वत, फूल–पौधों, पशु–पक्षी एवं समस्त जड़–चेतन के चित्रण के माध्यम से मानव व प्रकृति के अन्योन्याश्रित सम्बन्ध का वर्णन कर यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया है कि मानव विकास और संरक्षण के निमित्त '**तेन त्यक्तेन भुंजीथा**' की नीति ही पर्यावरण संतुलन का आधार है।

मुख्य शब्द– पर्यावरण, रामायण, महर्षि वाल्मीकि,संचेतना,प्रकृति, महाकाव्य, साहित्य,भाव।

आधुनिक परिवेश में पर्यावरण प्रदूषण एवं संरक्षण विषयक चिन्तन वैश्विक स्तर पर विद्ववत् समाज के मध्य चर्चा का विषय बना हुआ है। पर्यावरण असंतुलन के विध्वंसकारी परिणामों के रूप में ग्लोबल वार्मिंग, ओजोन परत का क्षय, जैव विविधता का ह्रास, तेजी से बढ़ता मरूस्थलीयकरण, समुद्रीय जल का अम्लीयकरण आदि समस्यायें सम्पूर्ण विश्व–पटल पर मुँह बाये खड़ी हैं, जिस पर शीघ्र अति शीघ्र अंकुश लगाना आवश्यक है। इन्हीं सब समस्याओं के निराकरण एवं धरती के लिए हरित भविष्य के प्रयास हेतु जहाँ संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन United Nations Climate Change Conference, 2015(COP21) पेरिस में यह सुनिश्चित किया गया कि पूर्व औद्योगिक काल से 2 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान को बढ़ने न दिया जाय तथा उसे मानक से कम अर्थात् 1.5 डिग्री सेल्सियस तक सीमित रखने का प्रयास किया जाय[1], वहीं हाल में संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन, 2021 (COP26) के अन्तर्गत पर्यावरण के क्षरण को रोकने के लिए कोयले के इस्तेमाल पर अंकुश लगाने पर सहमति जतायी गयी।[2]

प्राचीन काल में मानव का सम्पूर्ण जीवन प्रकृति पर निर्भर माना गया था। प्रकृति ही सर्वशक्तिमान् एवं नियामक मानी गयी थी। तत्कालीन वैदिक परम्परा में पर्यावरण के तीन घटक थे – जल, वायु एवं औषधियाँ, जिन्हें अथर्ववेद में "छन्दस्"[3] कहा गया है। परन्तु वर्तमान में पर्यावरण का क्षेत्र और भी व्यापक हो गया है। परि व आङ्. उपसर्ग पूर्वक √वृ वरणे धातु से ल्युट् प्रत्यय करके निष्पन्न पर्यावरण शब्द का अर्थ हमारे चारों तरफ के वातावरण से है, जिससे हम ढके हुये हैं। अतः पर्यावरण वह भित्ती है जो मानव को चतुर्दिक रूप से घेरे हुये है तथा उसके जीवन और क्रियाओं पर प्रभाव डालती

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

है। इसमें मनुष्य के बाहर के समस्त घटक, वस्तुयें, स्थितियाँ तथा दशायें सम्मिलित हैं, जो मानव के जीवन को प्रभावित करती है।[4]

पर्यावरण का साहित्य सृजन से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। "साहित्यिक रचनायें और कलाकृतियाँ मनुष्य के मस्तिष्क पर सामाजिक जीवन के प्रतिबिम्बों की उपज होती है।"[5] वस्तुतः महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण की पृष्टभूमि के रूप में पर्यावरण ही कार्य करता है। आदिकवि ने लौकिक संस्कृत साहित्य के आदि श्लोक का प्रणयन प्रकृति के रम्य क्रोड में क्रौंच वध की घटना से प्रभावित होकर ही किया था–

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत् क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।[6]

समाजशास्त्रीय डॉ0 विश्वम्भरदयाल गुप्ता का मानना है कि यहाँ पर निषाद के शरसंधान की सफलता से मुग्ध होकर महर्षि का काव्य प्रस्फुटन नहीं हुआ है अपितु बहेलिये के बाण से बिद्ध नर क्रौंच को मरते हुए देखकर क्रौंची के करूण विलाप की अनुभूति से जन्य सहानुभूति स्वरूप वाल्मीकि के हृदय में काव्य प्रस्फुटित हुआ।[7] इसी प्रकार सम्पूर्ण काव्य में पशु–पक्षियों व वनस्पतियों के प्रति सहानुभूति के दृश्य मिलते हैं।अपने कुलकुटुम्ब सहित भरद्वाज ऋषि के आश्रम में पहुँचकर भरत ने सर्वप्रथम महर्षि भरद्वाज का कुशलक्षेम पूछा तदोपरान्त आश्रम के पेड़–पत्तों एवं मृग–पक्षियों का कुशल समाचार पूछा–

वसिष्ठो भरतश्चैनं पप्रच्छतुरनामयम्।
शरीरेऽग्निषु शिष्येषु वृक्षेषु मृगपक्षिषु।।[8]

इस महाकाव्य में प्रकृति सदैव मनुष्य की सहचरी के रूप में परिलक्षित होती है। अत्रिमुनि के आश्रम में अनसूया व सीता संवाद के मध्य संध्या के आगमन पर अनसूया कहती हैं कि– हे मधुरभाषिणी सीते! तुम्हारी इस स्वयंवर विषयक कथा में मेरा मन बहुत लग रहा है; तथापि तेजस्वी सूर्यदेव रजनी की शुभ बेला को निकट पहुँचाकर अस्त हो गये। जो दिन में चारा चुगने के लिए चारों ओर छिटके हुए थे, वे पक्षी अब संध्याकाल में नींद लेने के लिए घोसलों में आकर छिप गये हैं; उनकी यह ध्वनि सुनायी दे रही है।[9] रात को विचरने वाले प्राणी उल्लू इत्यादि सब ओर विचरण कर रहे हैं तथा ये तपोवन के मृग पुण्यक्षेत्र स्वरूप आश्रम के वेदी आदि विभिन्न प्रदेशों में सो रहे हैं।[10] यहाँ अनसूया सीता को प्रकृति के माध्यम से रात्रिविश्राम हेतु प्रेरित कर रही हैं–

गम्यतामनुजानामि रामस्यानुचरी भव।[11]

प्राकृतिक दृश्यों का यथार्थ चित्रण महर्षि वाल्मीकि की निरीक्षण शक्ति पर आधारित है। प्रकृति के विविध रूपों का सूक्ष्म अवलोकन कर उसे काव्य रूपी हार में पिरोने में उच्चकोटि के कवि ही दक्ष हैं। महर्षि वाल्मीकि स्वयं प्रकृति की रम्य क्रोड में बसे आश्रमों में रहने के कारण प्रकृति के आह्लादकारी व सुखद स्वरूप को चित्रित करने में सफल हुये हैं। पम्पासरोवर का वर्णन करते हुये श्रीराम कहते है कि लक्ष्मण! फूलों से सुशोभित होने वाले इन वनों के रूप तो देखो; ये उसी तरह फूलों की वर्षा कर रहे हैं जैसे मेघ जल की वृष्टि करते हैं।[12] तथा फूलों से भरी हुयी वृक्षों की विभिन्न शाखाओं को झकझोरती हुयी वायु जब आगे को बढ़ती है, तब अपने–अपने स्थान से विचलित हुये भ्रमर मानो उसका यशोगान करते हुये उसके पीछे–पीछे चलने लगते हैं।[13] अरण्यकाण्ड में शरभंग ऋषि श्रीराम से आग्रह करते हैं कि नरश्रेष्ठ आप इस मन्दाकिनी नदी के मार्ग से चले जाइयेगा किन्तु जब तक पुरानी केंचुल का त्याग करने वाले सर्प की भांति मैं अपने इन जराजीर्ण अंगों का त्याग न कर दूं, तब तक दो घड़ी यहीं ठहरिये।[14] महर्षि वाल्मीकि ने प्रकृति की समस्त कलाओं एवं सौन्दर्य के साथ अपनी हृदयानुभूतियों का स्वभाविक

सम्बन्ध स्थापित करने का अथक प्रयास किया है। वस्तुतः मनुष्य का हृदय विविध भावों का आधार होता है और भावों का प्रकृति के साथ अटूट सम्बन्ध होता है। महर्षि वाल्मीकि ने कभी प्रकृति के सहज रूप पर अपनी भावुक दृष्टि डाली है, तो कभी उसके उग्र या दीप्त रूप पर। आदिकवि की भावुक दृष्टि पर्यावरण को जिस रूप में चाहती है उसी रूप में परिवर्तित कर देती है। उदाहरणतया सीता के वियोग में मनोहारी दृश्य भी श्रीराम को संतप्त करते है और वे लक्ष्मण से कहते है कि इस पम्पा तट पर पक्षी आनन्दमग्न होकर चहक रहे हैं। जलकुक्कुटों के रति सम्बन्धी कूजन तथा नर कोकिलों के कलनाद के व्याज से मानो ये वृक्ष ही मधुर बोली बोलते हैं और मेरी अनंग वेदना को उद्दीप्त कर रहे है। जान पड़ता है, यह अशोक पुष्प के लाल–लाल गुच्छे ही इस अग्नि के अंगार हैं, नूतन पल्लव ही इसकी लाल लपटे हैं और भ्रमरों का गुंज्जारव ही जलती आग का 'चट–चट' शब्द है।[15]

महर्षि वाल्मीकि पर्यावरण का मानवीकृत चित्रण करने में अत्यन्त निपुण हैं, अपने इस प्रयास में उन्होंने प्रकृति के नाना रूपों और व्यापारों पर मानवीय क्रिया–कलापों एवं भावनाओं को आरोपित किया है। डॉ0 शबनम गुप्ता के शब्दों में मानव स्वभाव एवं प्रकृति के इस मनोरम एक्य में जहाँ एक ओर वर्णनात्मक सूक्ष्मता है, वहीं विश्वसनीय भी है।[16] हेमन्त ऋतु का वर्णन करते हुये आदिकवि ने वनों पर मानवीय क्रियाओं का आरोप किया है–

अवश्यायतमोनद्धा नीहारतमसावृताः।
प्रसुप्ता इव लक्ष्यन्ते विपुष्पा वनराजयः।।[17]

अर्थात् रात में ओसबिन्दुओं और अन्धकार से आच्छादित तथा प्रातःकाल कुहासे के अंधेरे से ढकी हुयी ये पुष्पहीन वन श्रेणियाँ सोयी हुयी–सी दिखायी देती हैं। इसी प्रकार प्रकृति का काव्य में न्यास करते हुये महर्षि वाल्मीकि ने वन–वृक्ष के अतिरिक्त पशु–पक्षी, नदी, पहाड़, ऋतुओं की सशक्त मानवीय अभिव्यक्ति की है। वर्षा रूपी नायिका के सौन्दर्य का स्वभाविक चित्रण करते हुये श्रीराम कहते हैं–यह आकाश स्वरूपा तरूणी सूर्य की किरणों द्वारा समुद्रों का रस पीकर कार्तिक आदि नौ मासों तक धारण किये गये गर्भ के रूप में जलरूपी रसायन को जन्म दे रही है।[18] पर्वतों की नैसर्गिक शोभा का वर्णन करते हुये कहते हैं–मेघरूपी काले मृगचर्म तथा वर्षा की धारारूप यज्ञोपवीत धारण किये वायु से पूरित गुफा या हृदय वाले ये पर्वत ब्रह्मचारियों की भांति मानो वेदाध्ययन आरम्भ कर रहे है।[19] रावण द्वारा अपहृत सीता भी हंसों और सारसों के कलरवों से मुखरित हुयी गोदावरी नदी को प्रणाम करते हुये कहती हैं– हे मां! तुम श्रीराम से शीघ्र ही कह देना, सीता को रावण हर ले जा रहा है।[20] अरण्यकाण्ड में गृधराज जटायु द्वारा स्त्री के प्रति करूणाभाव रखकर परदारगामी रावण को रोकने की चेष्टा तथा सीता की रक्षा हेतु राक्षसराज से युद्ध करने का वर्णन प्राप्त होता है। वस्तुतः प्रकृति के मानवीकरण की यह शैली जहाँ एक ओर प्रकृति की निसर्ग छवि को प्रस्तुत करती है वहीं दूसरी ओर प्रकृति व मनुष्य के बीच तादात्मीकरण स्थापित कर प्रकृति के असीमित दोहन का मार्ग अवरूद्ध करती है। प्रकृति के प्रति मित्रवत् एवं बन्धुवत् व्यवहार ही उन्हें संरक्षित करने का प्रभावशाली माध्यम है।

प्रकृति के माध्यम से ही महर्षि ने अपने दार्शनिक सिद्धान्तों की भी पुष्टि की है।वनवास अवधि में भरत द्वारा राज्यभार ग्रहण करने हेतु अनुनय–विनय किये जाने पर श्रीराम के भरत के प्रति कहे गये शब्दों की अभिव्यक्ति पर्यावरण का आधार ग्रहण कर अत्यन्त भावमयी एवं अर्थपूर्ण हो उठती हैं।श्रीराम ने संसार की नश्वरता को प्रकृति की कलाओं का आधार लेकर बड़े ही सारगर्भित रूप से कहा– भाई! जो रात बीत जाती है, वह लौटकर फिर नहीं आती; जैसे यमुना जल से भरे हुये समुद्र की ओर जाती है किन्तु उधर से लौटती नहीं और जैसे सूर्य की किरणे ग्रीष्म ऋतु के जल को शीघ्रतापूर्वक सोखती रहती

है; ठीक वैसे ही दिन–रात लगातार बीतते हुये इस संसार में सभी प्राणियों की आयु का तीव्र गति से नाश कर रहे हैं।[21] किसी ऋतु का प्रारम्भ देखकर मानो वह नयी–नयी आयी हो, इससे पूर्व कभी न आयी हो, ऐसा समझकर लोग हर्ष से खिल उठते हैं परन्तु यह नहीं जानते कि इन ऋतुओं के परिवर्तन से प्राणियों की आयु का क्रमशः क्षय हो रहा है। जीवन के शाश्वत सत्य–जन्म–मरण का वर्णन करते हुये कहते हैं कि जैसे महासागर में बहते हुये दो काठ कभी एक–दूसरे से मिल जाते हैं और कुछ काल के बाद अलग हो जाते हैं उसी प्रकार स्त्री, पुत्र, कुटुम्ब और धन भी मिलकर बिछुड़ जाते हैं; क्योंकि इनका वियोग अवश्यभावी है।[22]

रामायणीय संस्कृति में न केवल पर्यावरण के मांजुल्य दृश्य परिलक्षित होते हैं अपितु प्रकृति के विध्वंसकारी परिणाम भी प्रकाश में आये हैं।बालकाण्ड में वायु द्वारा राजा कृषनाभ की कन्याओं को कुब्ज दोष से ग्रस्त किये जाने का वर्णन प्राप्त होता है–

तासां तु वचनं श्रुत्वा हरिः परमकोपनः।
प्रविश्य सर्वगात्राणि बभंज भगवान् प्रभुः।।
अरत्निमात्राकृतयो भग्नगात्रा भयार्दिताः।[23]

इसी प्रकार गंगा द्वारा पृथ्वी अवतरण बेला में राजा भगीरथ का अनुसरण करती हुई जह्नु ऋषि के यज्ञमण्डप को अपने जल प्रवाह में बहा ले जाने का वर्णन मिलता है–

ततो हि यजमानस्य जह्नेरभ्दुतर्मणः।।
गंगा सम्प्लापयामास यज्ञवाहं महात्मनः।[24]

इसके अतिरिक्त यक्षिणी ताटका द्वारा मल व कलुष जनपद की वन्य–सम्पदाओं को नष्ट–भ्रष्ट करने का उल्लेख प्राप्य है–

नहि कश्चिदिंम देशं शक्तो हागन्तुमीदृशम्।।
यक्षिण्या घोरया राम उत्सादितमसह्यया।[25]

जिसके परिणामस्वरूप वह ताटका वन अत्यन्त भयंकर हो गया था; चारो ओर झिल्लियों की झनकार सुनायी देती थी तथा भयानक हिंसक सिंह, व्याघ्र, सूअर, हाथी इत्यादि जन्तुओं से भरा पड़ा था। भयंकर बोली बोलने वाले पक्षी सब ओर फेले हुये थे व नाना प्रकार के विहंगम भीषण स्वर में चहचहा रहे थे और धव, अश्वकर्ण, ककुभ, बेल, तिन्दुक, पाटल व बेल प्रभृति कटीले वृक्षों से व्याप्त था।[26] इस प्रकार महर्षि वाल्मीकि के पर्यावरणीय सौन्दर्य एवं विध्वंस, इन दोनों ही वर्णन में आधुनिक विद्वान ग्रिफिथ टेलर के 'रूको और जाओ' (Stop & Go Determinism) के सिद्धान्त के स्त्रोत परिलक्षित होते हैं।वस्तुतः प्रकृति की अपनी सुन्दरता एवं मर्यादायें हैं। हमें प्रकृति को समझना चाहिये उसके बाद अपनी विकास नीतियों का निर्धारण करना चाहिये।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पर्यावरण ही महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण का आधार है,जिसने समय–समय पर इस महाकाव्य को गति व विस्तार प्रदान किया है।इस सम्पूर्ण काव्य में प्रकृति जहाँ अभिव्यक्त भावों को अर्थवत्ता प्रदान कर प्रभावपूर्ण बनाती है, वहीं सृजन को बोधगम्य बनाने व भाव समप्रेषण में भी सहायक सिद्ध होती है। आदिकवि ने पर्यावरणीय कारकों नदी, पर्वत, फूल–पौधों,

पशु–पक्षी एवं समस्त जड़–चेतन के चित्रण के माध्यम से मानव व प्रकृति के अन्योन्याश्रित सम्बन्ध का वर्णन कर यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया है कि मानव विकास और संरक्षण के निमित्त '**तेन त्यक्तेन भुंजीथा**' की नीति ही पर्यावरण संतुलन का आधार है।

सन्दर्भ–

1 .Sutter, John D.; Berlinger, Joshua (2015-12-12). "Final draft of climate deal formally accepted in Paris". CNN. Cable News Network, Turner Broadcasting System, Inc. Archived from the original on 2015-12-12.

2. Shalima, Halim. "COP26: New global climate deal struck in Glasgow". Archived from the original on 13 November 2021.

3.त्रीणि छन्दांसि कवयो वि येतिरे, पुरूरूपं दर्शनं विश्वचक्षणम्।/
टापो वाता ओषधयः, तान्येकस्मिन् भुवन आर्पितानि।। अथर्ववेद 18.1.17

4. वेदों में विज्ञान– डॉ0 कपिलदेव दिवेदी, पृ0. 252

5. कला साहित्य और संस्कृति –मातोत्से तुंग, पीपुल्स लिट्रेसी, दिल्ली 1983

6.वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 1/2/15

7.ल्खेक का समाजशास्त्र – डॉ0 वी0 डी0 गुप्ता,पृ0–14.15

8. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 2/90/8

9. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 2/119/3.4

10.वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 2/119/8

11.. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 2/119/10

12. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 4/1/11

13. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 4/1/14

14. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 3/5/38

15. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 4/1/28.30

16. वाल्मीकि रामायण का समाजशास्त्रीय अध्ययन – डॉ0 शबनम गुप्ता, पृ0– 45

17. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 3/16/23

18. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 4/28/3

19. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 4/28/10

20. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 3/49/31

21. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 2/105/19.20

22. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 2/105/25.27

23. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 1/32/23.24

24. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 1/42/34.35

25. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 1/24/31.32

26. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर, 1/24/13.14